बौद्ध स्थल कुशीनगर की आधुनिक अवस्था

कमलेश अहिरवार
पी.एच.डी. शोधार्थी
बौद्ध अध्ययन विभाग
साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय,
साँची, रायसेन–464661 (म.प्र)
kamleshraj22693@gmail.com

सारांशिका

कुशीनगर बौद्ध का एक महत्त्वपूर्ण पवित्र तीर्थ–स्थान है। भगवान् बुद्ध ने 45 वर्ष तक भिक्षु–संघ के साथ उत्तर में हिमालय की तलहटी से लेकर दक्षिण में विन्ध पर्वत तक, पूर्व में कजङ्गला निगम के मुखेलुवन से लेकर पश्चिम में कुरु प्रदेश की राजधानी थुल्लकोट्ठित तक भ्रमण करके सब प्राणियों के हित–सुख के लिये कल्याणकर धर्म का उपदेश देते हुए यहीं महापरिनिर्वाण को प्राप्त किया था। पालि ग्रन्थों में बुद्ध–काल से पहले के उत्तरी भारत व दक्खन के कुछ भाग को राजनीतिक दृष्टि से 16 महाजनपदों से विभाजित दर्शया गया है। इनमें मल्लों का भी नाम आता है, जिनकी राजधानी कुशीनगर थी। मल्लों के अनेक पौराणिक राजकुमारों का पालि साहित्य में वर्णन प्राप्त होता है, जैसे इक्ष्वाकु वंश आदि मल्लों ने भगवान् बुद्ध के काल से पहले ही स्वंय को गणतंत्र के रूप में विकसित कर लिया था। उन्हें दो शखाओं के रूप में बताया हैं, जिनमें से एक की राजधानी कुशीनगर एवं दूसरी की पावा थी। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् बुद्ध के समय यह अन्य बड़े जनपदों की राजधानियों की तुलना में विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं था क्योंकि आनन्द ने महापरिनिर्वाण के समय भगवान् से प्रार्थना की थी इस स्थल के अलावा किसी अन्य महत्त्वपूर्ण स्थल पर महापरिनिर्वाण प्राप्त करने के लिये इंगित करें। भारत में कुशीनगर की अपेक्षा चम्पा, राजगृह, श्रावस्ती, साकेत, कौशाम्बी एवं वाराणसी जैसे महानगर है, आप वहाँ निर्वाण प्राप्त करें।

1. वहाँ बहुत से धनवान व्यक्ति आपके भक्त हैं, वे आपके शरीर की पूजा करेंगे परन्तु इसके उत्तर में भगवान् बुद्ध ने कुशीनगर की प्राचीन महत्ता को इन शब्दों में बताया– ''आनन्द! इस कुशीनगर को छोटा नगर मत कहो। पूर्वकाल में यह स्थान बड़ा ही रमणीय, जनाकीर्ण एवं धन–धान्य सम्पन्न था। इसी स्थान पर मेरी छः बार मृत्यु हो चुकी है यह सातवीं बार यहाँ मेरा शरीरपात हो रहा है। महासुदर्शन नामक चारों दिशाओं का विजेता, देशों पर अधिकार प्राप्त, सात रत्नों से युक्त धार्मिक धर्मराजा चक्रवर्ती राजा था। यह कुशीनारा, राजा महासुदर्शन की कुशावती नामक राजधानी थी, जो कि पूर्व–पश्चिम लंबाई में बारह योजन, उत्तर–दक्षिण विस्तार में सात योजन थी।
2. भगवान् बुद्ध के कथानुसार उनके महापरिनिर्वाण के पश्चात् कुशीनगर की महत्ता उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई भगवान् बुद्ध के महापरिनिर्वाण के समय महाकश्यप भी राजगृह से कुशीनगर इसी मार्ग से गये थे। कुशीनगर बहुत समृद्धशाली नगर था। स्वयं भगवान् बुद्ध ने इसकी प्रसंशा की है तथा इस स्थान पर 103 सूत्तों का उपदेश दिया था। आचार्य बुद्धघोष ने उन विशिष्ट कारणों का उल्लेख किया है, जिनसे प्रेरित होकर कुशीनगर को परिनिर्वाणार्थ चुना था–
    1. महासुदस्सन सुत्तांत का उपदेश वहीं किया था।
    2. सुभद्र की प्रव्रज्या वहीं संभव थी।
    3. अस्थि विभाजन की समस्या हल करने वाला व्यक्ति वहाँ उपस्थित था।

मुख्य शब्द : बोध, आनन्द, अवस्था, महापरिनिर्वाण, सुत्त।

प्रस्तावना

मल्ल रट्ठ (मल्ल राष्ट्र) दो भागों में विभक्त था, जिनकी राजधानियाँ क्रमशः कुसिनारा एवं मावा में थी। इन्हीं के आधार पर ''मल्ल कोसिनारका' (कुसिनारा के मल्ल) ''मल्ल पावेय्यका'' (पावा के मल्ल), ये दो भाग इस वीर जाति के प्रदेशों के अनुसार कहलाते थे। कुसिनारा एवं पावा के बीच दूरी सुमंगलविलासिनी में तीन गावुत (करीब 6 मील) बताई है। ''पावा नगरतो तीणि गावुतानि कुसिनारानगर''। इससे प्रकट होता है कि ये दोनो राष्ट्र एक–दूसरे से अधिक दूरी पर नहीं थे। ककुत्थानदी इन दोनों प्रदेशों की विभाजक सीमा थी। भगवान् बुद्ध का महापरिनिर्वाण कुसिनारा के मल्लों के ग्राम–क्षेत्र में ही हुआ था। इसीलिये उन्होंने कहा था। ''भगवा अम्हाकं गामक्खेत्ते परिनिब्बुतो। न मयं दस्साम भगवतो सरीररानं भागं''4 अर्थात् ''भगवान् हमारे ग्राम क्षेत्र में परिनिवृत्त हुए हैं। हम उनकी धातुओं का भाग किसी का न देंगे।'' परन्तु द्रोण ब्राह्मण की सलाह पर जब भगवान् की धातुओं का विभाजन हुआ तो अन्य संघों एवं गणों की तरह मल्ल राष्ट्र की इन दोनो शाखाओं ने भी अपना अलग–अलग भाग पाया। मल्ल लोग वाशिष्ठ गोत्र के क्षत्रिय थे, क्योंकि महापरिनिर्वाण–सुत्त में आनन्द कुसिनारा के मल्लों को इसी नाम से सम्बोधित करते दिखाई गये हैं। दीघ–निकाय के महापरिनिब्बाण–सुत्त में मल्ल राष्ट्र की उपर्युक्त दोनों शाखाओं का उल्लेख हमें मिलता है तथा इसी प्रकार कुस जातक में भी। जैन ''कल्पसूत्र'' में हमें ''नव मल्लई', नव मल्लकि या नौ मल्ल राजाओं के संघ का उल्लेख मिलता है, परन्तु पालि त्रिपिटक में उनमें से केवल उपर्युक्त दो का ही उल्लेख है। मल्ल राष्ट्र की सीमाओं को ऊपर निर्दिष्ट विवरण से स्पष्ट है कि मगध और

कोसल राज्य तथा वज्जि गणतन्त्र उसके पड़ोसी थे। बुद्धकालीन गणतन्त्रों में सबसे अधिक शक्तिशाली वस्तुतः वज्जि और मल्ल ही थे। दीघ–निकाय के जनवसभसुत्त में इन दोनों पड़ोसी गणतन्त्रों का साथ–साथ उल्लेख किया गया है। ''वज्जिमल्लेसु।''5 इसी प्रकार मज्झिम–निकाय के चूल–सच्चक सुत्तन्त में भी इन दोनों गणराज्यों का उल्लेख साथ–साथ किया गया है। कुशीनगर के मल्लों का अपना सभागार था, जहाँ पर राजनीतिक तथा धार्मिक विषयों पर विवाद होते थे। आनन्द जिस समय तथागत की मृत्यु का समाचार लेकर कुशीनगर गये उस समय मल्ल अपनी राज्य सभा में थे। तत्पश्चात् उन्होंने अपने संथागार में ही तथागत के अंतिम संस्कार के प्रारूप पर विचार विमर्श किया था। दिर्घ निकाय के महापरिनिर्वाण सुत्तान्त में कुशीनगर के मल्लों में पुरषि नामक एक अधिकारी वर्ग का उल्लेख मिलता है जो रीस डेविड्स के मतानुसार अधीनस्थ कर्मचारियों का एक वर्ग था। नगर की स्थिति रक्षा एवं व्यापार की दृष्टि से सर्वथा अनुकूल थी। नगर के समीप ही उपवतन नामक शालवन था जिसके एक भाग को मल्लों ने प्रमोद उद्यान में परिणत कर दिया था। यह हिरण्यवती के दूसरे किनारे पर स्थित था। इस उपवतन शालवन में भी भगवान् ने अंतिम निवास किया था एवं यही युगल साल वृक्षों के नीचे उनका महापरिनिर्वाण हुआ था। उपवतन शालवन को कनिघम ने वर्तमान काया के माथा कुवर कोट से समीकृत किया है। महापरिनिर्वाण के दो शताब्दी बाद तक इसका (कुशीनगर) महत्त्व कुछ विशेष नहीं बढ़ा। इस बीच मगध के फैलते साम्राज्य ने मल्लों के छोटे गणतंत्र को हड़प लिया। महान शासक अशोक ने बौद्ध तीर्थों की अपनी यात्रा के दौरान यहाँ स्तूपों व स्तंभों इत्यादि का निर्माण कराया था। उनके विषय में निश्चय के साथ कुछ भी कहना संभव नहीं, क्योकि लगभग 800 साल बाद यहाँ आये चीनी यात्री युवान–च्वांग ने ही केवल अपने यात्रा वृत्तान्त में उनका वर्णन किया है। उनके अनुसार यहाँ तीन स्तूप व दो स्तंभ थे जो उनके समय में अशोक द्वारा निर्मित कहे जाते थे।

हालाँकि कुशीनगर में अशोक के बाद पाँच शताब्दियों में कुछ विशेष कार्य नहीं हुआ परन्तु अवश्य ही इसका महत्त्व काफी बढ़ गया, क्योंकि इस काल में बौद्ध धर्म न केवल भारत में बल्कि सुदूर क्षेत्रों तक भी जा पहुँचा। यहाँ होने वाली खुदाई से इस काल का एक स्तूप एवं उसके चारों तरफ बने छोटे स्तूपों व विहारों के बनने के साक्ष्य मिले हैं। चीनी यात्री फा–ह्यान ने (A.D. 399-414) यहाँ आने पर महापरिनिर्वाण की घटनाओं से संबंधित पवित्र स्थलों पर बने स्तूप तथा विहारों को देखा। उन्होंने यहाँ भिक्षुओं का रहते हुए देखा, जिससे प्रतीत होता है कि अवश्य ही उनके समय में कुशीनगर एक धार्मिक नगर रहा होगा।

कुशीनगर की आधुनिक अवस्था

1. भिक्षु महावीर द्वारा पुनरुद्धार

जिस समय कुशीनगर के टीलों की खोदाई हो रही थी, उस समय तक यहाँ दर्शनार्थ आये हुए व्यक्तियों के ठहरने का कोई प्रबन्ध न था। ना ही इस स्थान पर धर्मशाला थी और न कोई विहार था। कुशीनगर उजड़ा एवं जनशून्य पड़ा था। आस–पास के ग्रामीण किसान भूतप्रेतों के डर से दिन में भी अकेले आने में हिचकते थे। उन्हीं दिनों पूज्य भिक्षु महावीर–जो गतशताब्दी के उत्तर भारतीय प्रथम बौद्ध भिक्षु थे, यहाँ आये और रहने लगे। वे आरा के बाबू कुँवरसिह के सम्बन्धी थे एवं सन्1885 के स्वातन्त्र–संग्राम में उनके कन्धों से कन्धा भिड़ाकर अंग्रेजों से लड़े थे।7 किन्तु बाबू कुँवरसिंह की मृत्यु के बाद वे कुश्तियों में बाजी मारते हुए मद्रास होकर लङ्का पहुँचे। मद्रास में एक मुसलमान पहलवान के साथ उन्होंने कुश्ती मारी, जिसमें एक हजार रूपये पुरस्कार में मिले थे। लङ्का पहुँचकर वे इन्द्रासभ स्थविर से प्रभावित होकर भिक्षु हो गये। भिक्षु महावीर पहले भी कुशीनगर आ चुके थे, किन्तु यहाँ रहने के विचार से नहीं। पहली बार के दर्शन से ही उन्हें इस स्थान से विशेष प्रेम हो गया था, जिसकी प्यास कभी न बुझती थी। इस बार वे यहाँ स्थायी रूप से रहने के लिये सन् 1890 ई. मे कलकत्ता से चले आये और एक छोटी–सी पत्तों की झोपड़ी बनाकर उसमें रहने लगे। आस–पास के निर्धन किसान ही आपके अन्नदाता थे।

बौद्ध विहार का निर्माण एवं भिक्षु चन्द्रमणि स्थविर

भिक्षु महावीर ने एक ब्राह्मण से साठ रूपये बीघा पर कुछ जमीन खरीदकर बौद्ध विहार के बनवाने का आयोजन किया। इस शुभ कार्य को चटगाँव के पँवा नगरवासी श्री खेजरी ने पन्द्रह हजार रूपये की लागत से सन् 1902 ई. में सम्पादित किया। इसके पहले भी श्री खेजारी ने उन्हें पर्याप्त धन की सहायता दी थी। वर्तमान् बौद्ध विहार के पश्चिमी बरामदे में लगे हुए दोनों चित्र प्रत्येक यात्री को भिक्षु महावीर और श्री खेजारी की याद दिलाते हैं, क्योंकि इन दोनों में से अकेला कोई भी इस विहार को न बना सकता। भिक्षु महावीर ने अपने हिस्से का कार्य–सम्पादितकर सन् 1920 के चैत्र मास में सदा के लिए अपनी आँखे बन्द कर लीं। भिक्षु महावीर के पश्चात् पूज्य चन्द्रमणि महास्थविर ने कुशीनगर की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए भरपूर प्रयत्न किया है। आपका जन्म सन् 1875 ई. में ज्येष्ठ वदी 6 मंगलवार को अराकान की रौंच्छौं नदी के पूर्वी तट पर स्थित पौपङ्गवाङ् नामक गाँव में हुआ था। सन् 1892 में महाबोधि सभा के संस्थापक स्वर्गीय अनागारिक धर्मपाल एवं थियोसोफिकल सोसाइटीं के अध्यक्ष श्री ऑलकाट महाबोधि सभा के प्रचारार्थ अराकन गये। कलकत्ता में भिक्षु महावीर से भेंट हुई। उन्होंने ''आओ बच्चा! आओ बच्चा!!8 कहकर बुलाया और उनके पढ़ने लिखने का सारा प्रबन्ध कर दिया। कुछ दिन पश्चात् भिक्षु महावीर गहमर आये एवं भिक्षु चन्द्रमणि को कलकत्ता से बुलाकर वहीं पढ़ने का प्रबन्ध किये। जिस समय भिक्षु महावीर कुशीनगर में रहते थे और विहार के निर्माण में लगे थे, तब भिक्षु चन्द्रमणि गहमर से कुशीनगर आये तथा बर्मा के मौलमीन नगर के पास 'कोन्हा' में पालि ग्रन्थों का पूर्णरूप से अध्ययन करने के लिए चले गये। भिक्षु चन्द्रमणि के समय कुशीनगर में हुए कार्यों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

स्तूप का जीर्णोद्धार

बौद्ध विहार का निर्माण हो गया। परिनिर्वाण मन्दिर की मरम्मत हो गई किन्तु महानिर्माण (ए) खोदाई के बाद भी ज्यों का त्यों पड़ा ही रह गया। पुनः सन् 1928 में कुशीनगर में पधारे, जो बर्मा हेन्टजा नगर के रहने वाले थे, जिनका का नाम ऊ फोच्यू था; उन्होंने स्तूप का जीर्णोद्धार करवाने के लिए पुनः सरकार को पत्र

लिखा। सरकार ने इस शर्त पर जीर्णाद्धार की स्वीकृति दी कि वे सारा व्यय जमा कर दें। सरकार स्वयं जीर्णोद्धार का कार्य करायेगी। सन् 1926 के प्रारम्भ में जीर्णोद्धार का कार्य आरम्भ हुआ, जो सन् 1927 के अन्त में पूर्ण हुआ। पुरातत्त्व विभाग कर्मचारियों का विचार था कि नवीन स्तूप साँची के स्तूप जैसा बने, किन्तु स्थानाभाव के कारण वैसा न बन सका। ठेका देने के कारण स्तूप भी मजबूत नही बना यही कारण है कि इन थोड़े ही दिनों में उसका पलस्तर फटने लगा एवं पपड़ियों की भाँति छूट–छूटकर गिरने लगा। स्तूप की पहली गोलाई 180 फीट थी, परन्तु अब केवल 165 फीट है। ऊचाई में भी 75 फीट ही है। स्तूप के भीतर एक 8 फीट ऊँचा वर्तमान् स्तूप बनवाकर उसमें नये ताम्रपत्र एवं पालि त्रिपिटक के कुछ अंश की स्थापना गई। सुवर्ण तथा रौप्य बोधि वृक्ष तथा बहुत सी मूर्तियाँ रखी गई। खनन–कार्य से प्राप्त भस्तावशेष की भी स्थापना की गई। यह सारा कार्य चन्द्रमणि महास्थविर के प्रधानत्त्व में ही सम्पादित हुआ।

पुनः ऊ फोच्यू एवं उनकी धर्मपत्नी माकिनसू का विचार हुआ कि स्तूप को रंगून के श्वेडगोंपिगोडा के समान सुवर्णाम्वित कर दें। बहुत से लोगों ने उनके इस विचार को रामाभार के स्तूप के जीर्णोद्धार के रूप परिवर्तित कर लेने को कहा किन्तु वह भाग्यशाली दम्पति स्तूप को सुवर्णान्वित देखना चाहती थी।9 सन् 1938 में ग्यारह हजार नौ सौ रुपये की लागत से इस पवित्र कार्य का भी सम्पादन हो गया। सोना लगाने वाले कारीगरों के अदक्ष और स्तूप के पलस्तर के मजबूत न होने के कारण सोना चिरस्थाई नहीं हुआ, तथापि इस पुण्य–कृति से ऊ फोच्यू तथा श्रीमति माकिनसू का नाम कुशीनगर के इतिहास में अमर हो गया।

माथाकुँवर के मन्दिर का निर्माण

माथाकुँवर की मूर्ति सन् 1912 में अपने प्राचीन सिंहासन पर बैठा ही गई थी एवं उसकी यत्किंचित मरम्मत भी हो चुकी थी, किन्तु मन्दिर का निर्माण नही हुआ था। सन् 1926–27 में श्री ऊ फोच्यू ने इस मन्दिर को भी बनवाया। मन्दिर अपने प्राचीन दीवारों पर ही बनाया गया, किन्तु सिंहासन में बहुत–सी मूर्तियों के होने के कारण सामने को निचला भाग, नहीं निकाला गया, इससे सिंहासन की प्राचीन सुन्दरता का अनुमान लगाना भी कठिन होता।10 वर्षाकाल में वह पानी से भर जाता है, किन्तु उससे मन्दिर को कोई क्षति नहीं पहुँचती है।

बुद्ध जन्यती महोत्सव और मेला

भिक्षु चन्द्रमणि महास्थविर ने सन् 1928 की वैशाख–पूर्णिमा को कुशीनगर में बुद्ध जयन्ती महोत्सव का आयोजन किया तथा मेला लगना भी आरम्भ हुआ। कुशीनगर का बुद्ध जयन्ती महोत्सव विशेष दर्शनीय होता है। महोत्सव के बुद्ध पूजा, रथयात्रा, जुलूस, बौद्ध–महासम्मेलन, महापरिनिर्वाण सूत्र का पाठ, धर्मोपदेश इत्यादि अनेक कार्य–क्रम होते हैं। इसमें सम्मिलित होने के लिए देश विदेश के प्रतिनिधि एवं विद्वान आते हैं। कुछ वर्ष पूर्व महोत्सव का जुलुस कसया जावा करता था, जुलुस में सम्मिलित सभी व्यक्तियों की श्री महावीर प्रसाद बकील (कसया) शर्बत पिलाते थे तथा सभा आदि का सारा प्रबन्ध कराते थे, किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् कसया वासियों की उपेक्षा के कारण अब जुलुस कसया न जाकर कुशीनगर के खँडहर की ही प्रदक्षिणा करता है एवं सन्ध्या को खँडहर के विस्तृत मैदान में बौद्ध महासम्मेलन तथा विराट् सभा होती है।11 मेला प्रतिवर्ष लगभग एक मास रहता है, जो बुद्ध जयन्ती से प्रारम्भ होता है। बुद्ध जयन्ती महोत्सव एवं मेला के होने से धीरे–धीरे जनता से सम्पर्क होने लगा है। वह कुशीनगर के महस्व को समझने लगी है।

चन्द्रमणि निःशुल्क पाठशाला

कुशीनगर के आसपास की निर्धन और अशिक्षित ग्रमीणों को शिक्षित करने के लिए सन् 1929 ई. में लंका निवासी भिक्षु श्रद्धानन्द ने एक निःशुल्क पाठ शाला की स्थापना की। उन्होंने पाठशाला का नाम अपने गुरु के नाम पर ही ''चन्द्रमणि निःशुल्क पाठशाला'' रखा। वे चन्द्रमणि महास्थविर के ही शिष्य थे। उनके सम्बन्ध में हम ''लंका यात्रा'' में लिख चुके हैं। उनके बिना प्रयत्न के पाठशाला का जीवित रहना सम्भव न था। वे इस पाठशाला के छात्रों एवं अध्यापकों के माँ–बाप थे। किन्तु खेद है कि उन्होंने सन् 1934 में ही अपनी जीवन–लीला संवरण कर लीं। भिक्षु श्रद्धानन्द के देहान्त के बाद पाठशाला का सारा भार चन्द्रमणि महास्थविर के ऊपर आ गया। वही इस पाठशाला का संलाचन करते थे। सन् 1942 में भिक्षु श्री कित्तिमाजी के प्रयत्न से सेठ श्री युगलकिशोर बिड़ला ने सात हजार रूपये की लागत से एक सुन्दर पाठशाला भवन का निर्माण करा दिया, जिससे न केवल पाठशाला भवन के अभाव से यह पाठशाला आगे बढ़ गई। पाठशाला के शिक्षण और सुचारु रूप से कार्य सम्पादन में श्री छाँगुर प्रसाद सिंह मौर्य (बजरकेरइया) जैसे त्याग अध्यापक का सहयोग एक महान कार्य किया है, जिसकी अमिट छाप पाठशाला के जीवन पर सदा बनी रहेगी। वहाँ आसपास की जनता कुशीनगर के बौद्ध विहार के कुँआ का पानी तक पीने में पाप समझती थी और अपने बच्चों को बौद्धों की पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजने में हिचकती थी किन्तु भिक्षु श्रद्धानन्द एवं चन्द्रमणि महास्थविर के सत्कार्यों के प्रभाव से आसपास के छोटे–छोटे स्कूल टूट गये हैं तथा सब लोग अपने बच्चों के लिए यहीं भेजने लगे।

महावीर विद्यालय एवं अन्य भवन

भिक्षु चन्द्रमणि महास्थविर ने सन् 1944 में कुशीनगर के पुनरुद्धारक के नाम पर 'महावीर विद्यालय' की स्थापना की अपितु इस विद्यालय में पढ़ने के लिए विद्यार्थी दूर–दूर से आकर इस पवित्र स्थान में रहकर सदाचार का पालन करते हुए अच्छी शिक्षा पाते थे। पूर्व में वर्णित बौद्ध विहार के अतिरिक्त कुशीनगर का भिक्षु सीमा–गृह और अराकनी शरणार्थियों द्वारा निर्मित धर्मशाला भी दर्शनीय हैं। दोनों के ऊपरी भाग में बुद्ध मन्दिर बन हुए हैं। भिक्षु सीमा–गृह में अनेक भाषाओं के ग्रन्थों से सुसज्जित 'परिनिर्वाण पुस्तकालय' बौद्ध संस्कृति का अध्ययन करने के लिए बहुत लाभप्रद है।12 कुशीनगर में दर्शनार्थ आनेवाले यात्रियों को विश्राम करने के लिए सन् 1934 ई. में सेठ श्री युगलकिशोर बिड़ला ने एक सुन्दर धर्मशाला का निर्माण कराया। इस धर्मशाला के बन जाने से एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति हुई है, जो आये दिन कुशीनगर के सब भवनों से सुन्दर और शोभनीय है।

बुद्ध कॉलेज एवं शाल–वाटिका

भिक्षु श्रद्धानन्द एवं चन्द्रमणि महास्थविर के सत्प्रयत्न से चन्द्रमणि

निःशुल्क पाठशाला का कार्य भली–भाँति सम्पादित हो रहा था किन्तु उच्च शिक्षा के विद्यालयों का अभाव था। सन् 1934 ई. में इस दिशा में बाबा राघवदास का ध्यान आकृष्ट हुआ तथा चन्द्रमणि महास्थविर के सहयोग से बौद्ध विहार के एक बरामदे में बुद्ध कॉलेज का कार्य प्रारम्भ किया गया। सन् 1936 ई. में स्वर्गीय आचार्य धर्मानन्द कौशाम्बी द्वारा कालेज भवन का शिलान्यास हुआ। उन दिनों पं. द्वीपनारायणमणि जैसे उत्साही प्रधानाध्यापक के सतत प्रयत्न से कॉलेज–भवन का निर्माण होना प्रारम्भ हुआ, जो उनके अध्यवसाय और घोर परिश्रम से कुछ ही दिनों के पश्चात् बनकर तैयार हो गया। (इस बात को भी नहीं भूलना चाहिये कि नवीन कॉलेज–भवन का पुनः शिक्षामन्त्री बाबू सम्पूर्णानन्द के हाथों शिलान्यास जून सन् 1939 में कराया गया!) यदि इस कॉलेज को पं. द्वीपनारायणमणि जैसा योग्य कार्यकत्ता न मिला होता तो सम्भव था कि यह इतना शीघ्र उन्नति नहीं कर सकता।13 पाठक जानते हैं कि बुद्धकाल में निर्वाण स्थल शालवन उपवत्तन था किन्तु समय के परिवर्तन के साथ वह भी अपना ढाँचा बदल चुका। आजकल तो शिशपा वन बना हुआ है! 1936 ई. में गोरखपुन कमिश्नरी के कमिश्नर श्री आर.सी. ए. एस. होवर्ट का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। जब वे यहाँ पधारे, तब शालवन को न पाकर उन्हें महान् दुःख हुआ। उन्होंने इसे पुनः शाल वाटिका के रूप में देखने का संकल्प किया एवं बहुत सा धन व्यय करके साखू का बीजा रोपण कराया। सम्प्रति कुशीनगर में परिनिर्वाण मन्दिर के पास जो छोटे–छोटे सात साखू के वृक्ष दिखाई देते हैं, वे श्री होवर्ट की ही पुण्य कृति है।

निष्कर्ष :

जनरल श्री ए. कनिंघम की खोज, पुरातत्त्व विभाग के खनन कार्य एवं भिक्षु महावीर के पदार्पण से कुशीनगरवासी एवं अन्य भारतीय तथा विदेशी इतिहासप्रेमी व्यक्तियों में जो सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना जागी थी, वह बराबर उन्नति कर रही है। एक पीढ़ी के पश्चात् दूसरी पीढ़ी में वह अपना कार्य विस्तृत करते जा रही है। लंका, बर्मा, स्याम, चीन, जापान, मंगोलिया, तिब्बत, नेपाल, भूटान, सिकिम, साइचेरिया एवं भारत के विभिन्न प्रदेशों के जो यात्री इस पवित्र तीर्थस्थान का दर्शन करने आते हैं, उन्हें थोड़ी देर के लिए सन्तोष हो जाता है तथा वे इसके उत्थान के नये–नये स्वप्न देखते हैं किन्तु क्या कुशीनगर के नागरिक और अन्य इतिहास तथा धर्म के पुजारी इतने से ही सन्तोष कर लेंगे? उन्हें चाहिए कि कुशीनगर में एक संग्रहालय की स्थापना करें एवं स्थानीय तथा जिले के विभिन्न स्थानों के खनन कार्य से प्राप्त मूर्ति मुद्रा इत्यादि को एकत्र करें, जिससे यात्रियों को कुशीनगर की गौरव–गाथा साक्षात् दृष्टिगोचर हो और वे इसके महत्त्व को भली–भाँति समझ सकें। कुशीनगर से प्राप्त जो वस्तुयें प्रान्तीय संग्रहालय लखनऊ में हैं, उन्हें वापस करायें या उनकी प्रतिलिपि मँगाकर संग्रहालय को परिपूर्ण करें। इस प्रकार कुशीनगर के पुनरुद्धार तथा जीर्णोद्धार सम्बन्धी अनेक कार्य करने शेष हैं, जिनको पूर्ण करना भारत सरकार पर परम कर्त्तव्य है। इस अवस्था में जब कि विश्व के सभी बौद्ध राष्ट्र क्रमशः स्वतन्त्र हो रहे हैं एवं परस्पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं. तब भारत सरकार को चाहिए कि उनके पवित्र तीर्थ–स्थानों की हर एक प्रकार से रक्षा और उत्थान के कार्य कर उनसे अपना प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित करे। उन देशों से आने वाले यात्रियों को सब प्रकार से यात्रा सम्बन्धी सुविधा दे एवं प्रान्तीय सरकार के ऊपर इस बात का बल दे कि वह सर्वदा उक्त कार्य करने के लिए कटिबद्ध रहे, जिससे परस्पर मैत्री बढे एवं विश्व–बन्धुत्त्व के भाव से ओतप्रोत होकर पुनः अन्य देशवासी भारत को अपना अग्रणी समझें। इस प्रकार कुशीनगर के शालवन उपवत्तन में परिनिर्वाण मंच पर लेटे हुए परम कारुणिक तथागत ने जो अप्रमाद के साथ विहरते हुए जीवन के लक्ष्य को पूर्ण करने का प्रवचन दिया था, उस उपदेश की छाप कुशीनगर के नागारिकों के हृदय में सदा अंकित रहे और वे अपने अतीत की विशिष्टताओं को जानकर पुनः बुद्ध, धर्म एवं संघ की शरण लें।

सन्दर्भ सूची :

1. द्वारिकादास शास्त्री, दीघनिकायपालि महापरिनिर्वाण सूत्त पृ.सं. 328
2. सुमंगलविलासिनी, भाग–2 पृ.सं. 573
3. भरत सिह उपाध्याय, बुद्धकालीन भारतीय भूगोल, पृ.सं. 292
4. द्वारिकादास शास्त्री, दीघनिकायपालि, पृ.सं. 143–144
5. विनय पिटक (हिन्दी अनुवाद) पृ.सं. 252–253
6. डॉ. प्रिय सेन सिंह, भारत के प्रमुख बौद्ध तीर्थ स्थल, पृ.सं. 26
7. भिक्षु धर्मरक्षित, कुशीनगर का इतिहास, पृ.सं. 174
8. भदन्त आनन्द कौसल्यायन,जातक, पृ.सं. 290
9. गाइल्स : ट्रेविल्स ऑव फा–ह्यान, पृ.सं. 40–41
10. पी.वी. बापट, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, पृ.सं 188
11. राम प्रसाद बौद्ध, भारत के प्राचीन बौद्ध विश्वविद्यालय एवं महाविहार, पृ.सं. 61
12. बलदेव उपाध्याय, बौद्ध–दर्शन–मीमांसा, पृ.सं. 18
13. गेरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियों का इतिहास, पृ.सं. 78